ओमप्रकाश वाल्मीकि के 'बस्स ! बहुत हो चुका' में चित्रित दलित चेतना

विजय सदामते
शोध छात्र, हिंदी विभाग, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर.

आधुनिक काल के साहित्य में सामाजिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि का चित्रण हो रहा है । इसके साथ साथ शोषित दलित और नारी को साहित्य का विषय बनाया जा रहा है । दलित सामाजिक परिवर्तन की अपेक्षा रखता है । महात्मा ज्योतिराव फले, छत्रपति शाहू महाराडज, डॉ. बाबासाहब अंबेडकर जैसे महापुरुषों के कार्य के फलस्वरुप दलितों के जीवन में परिवर्तन आने लगा है । दलित समाज संगठित होकर अपने अधिकारों की मांग करने लगा है । आज दलितों में शिक्षा के सुअवसर के कारण दलित अपने अधिकारों की लडाई लढ रहे हैं । अत: दलित समाज पूँजीवादी हिंदू समाज व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष एवं विद्रोह करने लगा है ।

आज दलित पारंपारिक जीवन प्रणाली को त्यागकर वे समाज में परिवर्तन लाने के लिए प्रयत्नशील हो रहे हैं । शिक्षा के माध्यम से समाज की उन्नति, विकास और रक्षा के लिए दलित सतत कार्यरत हो रहे हैं । दलितों में संगठन, दलित जागरण, समानता, हक्क एवं अधिकारों की मांग आदि के रूप में चेतना दिखाई देती है । इससे यह स्पष्ट होता है कि आज दलितों में अस्मिता का अहसास हो रहा है । वह जातिवादिता, रूढ़ि-परंपरा, अंधविश्वास का विरोध करते हैं । स्वातंत्र्योत्तर काल में दलितों के उन्नत्ति के लिए प्रावधान बनाए गए हैं । दलित विमर्श के प्रख्यात लेखक ओमप्रकाश वाल्मीकि न दलित समाज की समस्याओं को समझकर उन्हें बारीकी और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है । उनके अनुसार, ''दलित शब्द का अर्थ है जिसका दलन हुआ और दमन हुआ है, दबाया गया है उत्पीड़ीत, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित घृणित आदि ।''[1] आजकल दलित शब्द को लेकर काफो चर्चा चल रही है । ओमप्रकाश वाल्मीकि की कविताओं में जो आग है, वह बेवजह या बेमानी नहीं है उसमें अनुभव की चिंगारी है यही चिंगारी साहित्य में एक नए आंदोलन को जन्म देती है । यह कविताएँ साहित्य में नवीन क्रांति को जन्म देती है । यह कविताएँ साहित्य में पुनर्पाठ को आमंत्रित करती है जो आज के संदर्भ में बेहद जरुरी हैं । वाल्मीकि जी की कविताओं में परिवर्तन की गूँज नजर आती है, वे बदलाव के लिए उत्सुक दिखाई पड़ते हैं । ये कविताएँ दलितों को प्रेरणा देती है । कवि अपनी अपनी कविताओं स दलितों में बदलाव की अपेक्षा रखते है ।

चेतना शब्द का प्रयोग साहित्य, दर्शन और मानवविज्ञान में मिलता है । चेतना का संबंध मानव की आंतरिक शक्ति चित से होता है । चेतना एक ऐसी प्रवृत्ति है जो जीवन को उत्तेजित करती है । चेतना का अर्थ जीवन में मिलनेवाली प्रेरणा से है । वह एक ऐसी प्रेरणा, शक्ति एवं ताकत है जो अन्याय का विरोध करती है वह अपनी अस्तित्व की रक्षा के लिए विद्रोह करती है । दलित चेतना के बिना दलित साहित्य अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सकता । दलित चेतना के माध्यम से ही दलित वर्ग में रुढ़ियों से हटकर नया कुछ सोचने, समझने तथा करने की क्षमता पैदा हुई है । डॉ. बाबासाहब अंबेडकरजी ने अपने लेखन और भाषणों के माध्यम से दलितों में नयी चेतना का संचार किया तो कहना उचित होगा कि दलित चेतना के प्रेरणास्त्रोत अम्बेडकरजी ही हैं । दलित चेतना के संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि जी के विचार इस प्रकार हैं - ''दलित की व्यथा, दु:ख-पीड़ा, शोषण का विवरण देना या बखान करना ही दलित चेतना नहीं है, या दलित पीड़ा का भावुक और अश्रु-विगलित वर्णन जो मौलिक चेतना से विहिन हो, चेतना का सीधा संबंध दृष्टि से होता है जो दलितों की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक भूमिका की छवि के तिलस्म को तोड़ती है । वह है दलित चेतना । दलित मतलब मानवीय अधिकारों से वंचित, सामाजिक तौर पर जिसे नकारा गया हो । उसकी चेतना यानी दलित चेतना ।''[2] साहित्य समाज का दर्पण कहलाता है । सर्वप्रथम दलित साहित्य द्वारा ही समाज में दलित वर्ग की वर्तमान अवस्था का चित्रण किया गया है । दलित साहित्य के माध्यम से दलित वर्ग में एक जन-जागृति पैदा हुई और दलित समाज को एक नई दिशा प्राप्त हुई ।

'बस्स ! बहुत हो चुका' काव्यसंग्रह में दलित चेतना निम्म रुप से प्रस्तुत हुई है -

1) गुलामी के प्रतिविद्रोह

प्राचीन काल से दलितों को गुलाम बनाया गया । उनकी स्थिति का फायदा उठाकर नवाब, जमींदार जागीरदारों ने उनपर अन्याय अत्याचार किए । स्वातंत्र्योत्तर काल में इन अत्याचारों से तंग आकर दलित समाज विद्रोह करने लगा । भारतीय समाज में वर्णव्यवस्था को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया । समाज के उँच-नीच, सवर्ण दलित आदि कई भेद थे । उच्च वर्ग निम्न वर्ग का शोषण करता है, जब तक उच्च वर्ग की मानसिकता में बदल नहीं होता तब तक समाज परिवर्तन असंभव है । इक्कीसवी सदी में भी दलितों पर अन्याय अत्याचार हा रहे है । मनुस्मृति का दहन करके सालों बीत चुके परंतु आज भी समाज की मानसिकता में बदलाव नजर नहीं आ रहा ।

प्रस्तुत कविता संग्रह में कवि ने सामंतवादी समाज के शोषकों के शोषण की तीव्रता को प्रकट किया है -

पाला है भूखे बच्चों को
''बहला-फसला कर

इस इन्तजार में
कि एक रोज बीत जायेंगे
ये संताप भरे दिन
हटकर बिखर जायेंगे
आदम भेड़ियों के दाँत''[3]

कवि आशा करता है कि आनेवाले समय में दलितों के बच्चे शोषित नहीं रेहेंगे । अपने परिश्रम के बल पर वे तरक्की करेंगे । वे भूखे प्यासे बच्चे एक दिन शोषण की दोवारों को तोडकर बाहर आयेंगे । तभी इन बच्चों को मनुष्य रुप मिल पाएगा । कवि दलितों के बच्चों को इस शोषण को तोडने के लिए प्रेरित करते हैं ।

इन कविताओं में वर्णव्यवस्था के खिलाफ आक्रोश भरा हुआ है । दलितों ने सदियों से यातनाओं को सहा है । लकिन अब दलित उस कठोर दासता को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं है । वह अब इन यातनाओं के विरोध में आक्रोश कर रहा है । उसने अपने आक्रोश की अभिव्यक्ति पूर्ण संवेदना के साथ की है । उदाहरण के रुप में ये पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

''गहरी पथरीली नदी में
असंख्य मूक पीडाएँ
कसमसा रही हैं
मुखर होने के लिए शेष से भरी हुई
बस्स
बहुत हो चुका चुप रहना''[4]

दलितों ने दु:ख पीड़ा यातनाओं को भोगा है । उपयुक्त पंक्तियाँ इस त्रासदीपूर्ण जीवन को प्रकट करती हैं । कवि ने दलितों में उठनेवाले आक्रोश को अभिव्यक्त किया ह । कवि खुद दलित जाति के होने के कारण उन्हाने अपने अनुभव को अभिव्यक्त किया है । इन यातनाओं को भोगने से उनकी हथेलियाँ पसीने में डूब जाती हैं और उनकी आँखों में इतिहास की क्रूरता एवं अन्याय प्रतिबिंबित होने लगता है । कवि मानवीय समाज और भीड़ के बीच रहते हुए ऐतिहासिक अनुभवों से अपने को मुक्त नहीं कर पाते । अत: कहना सही होगा कि स्वतत्रता प्राप्ति के बाद भी सवर्ण समाज दलितों को आजादी देना नहीं चाहता । उन्हें गुलाम बनाए रखना चाहता है ।

2) रुढ़ि एवं परम्परा के प्रति विद्रोह

प्राचीन काल से आज तक समाज का एक वर्ग विशषता दलित वर्ग वैसा ही उपेक्षित रहा जैसे पहले था । धर्मग्रंथ को आधार बनाकर ब्राह्मण दलितों को लूट रहे थे और अपने पेट पाल रहे थे । वे दलितों को गुलाम बनाकर रखना चाहते है लेकिन अब देश आजाद हो चुका है । वह इन अन्यायी रुढ़ो-परम्परा को पहचानने लगा है । वह उसका खुलेआम विरोध कर रहा है । समाज परिवर्तन के लिए अपनी स्थितियों, धारणाओं और व्यवहार में परिवर्तन लाना आवश्यक है । स्वार्थ के कारण पूँजीपति दलित समाज और मजदूर वर्ग पर अन्याय अत्याचार करते रहे । लेकिन आज दलित समाज अपने उपर होनेवाले अन्याय अत्याचारों से परिचित हो रहा है । अपने अन्याय के खिलाफ संगठित होकर लड रहा है । संगठन एक ऐसी शक्ति हे जो दुर्बलों को भी सबल बना देती है । विश्व का इतिहास साक्षी है कि बल पर लोग जेता-विजेता बने । डॉ रघुवीर सिंह कहते हैं - ''किसी भी तरह ते अन्याय का प्रतिकार करने के लिए संगठन सहयोग पहली आवश्यकता है । अछुतों की संगठन शक्ति भी उन्हें सत्ता में भागीदारी दे सकती है''[5] यह आंदोलन सामाजिक चेतना का प्रतीक है जिसे दलित साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया ।

वाल्मीकिजी की कविताओं में जहाँ एक ओर वर्णव्यवस्था के प्रति विद्रोह है तो वहीं दूसरी ओर दलित वर्ग की महत्ता को स्थापित करने की ललक भी -

''पेड़
तुम पेड़ उसी वक्त तक
पेड़ हो,
जब तक ये रहे पत्ते
तुम्हारे साथ हैं
पत्ते झरते ही
पेड़ नहीं ठूठ कहलाओगे''[6]

आज भी हिंदू समाज व्यवस्था में ब्राह्मण-शुद्र भेदभाव किया जाता है परंतु आज के मायने में जो दलित है वे बौद्ध धर्म स्वीकार कर रहे हैं । तथकथित छोटी जाति में पैदा होकर भी अपने समाज को मुख्य धारा से जोडने की उत्कट जिजीविषा इन कविताओं में दिखाई देती है यही उनके जीवन की शक्ति है ।

''याद करों उस माँ का चेहरा
जिसके सामने फक दिये हो
नोच-नोचकर
उसकी माँ के वस्त्र''[7]

इन पंक्तियों में एक असहाय दलित माँ का अत्यंत मार्मिक एवं स्वाभाविक स्वरुप दर्शाया है जिसके सामने उसके बेटे को क्रूरता के साथ पीटा जा रहा है । उसकी गलती इतनी ही थी की उसने अपनी इच्छा से जीवन जीने की कोशिश की । वह अपनी इच्छा से फ्लो और सहज नदी की लहरों को पसंद करने लगा था अर्थात वह स्वातंत्र्य की अनुभूति ले रहा था । ऐसी अमानवीय पीड़ा को शोषक वर्ग कभी नहीं महसूस कर सकता बेटे के सामने माँ के वस्त्र नोचकर फक देना यह भारतीय समाज के लिए एक कलंक है और यह कलंक सवर्ण को आनंद प्रदान करता है । माँ दुनिया की बहुमूल्य मूरत है जिसके सामने बड़े-बड़े व्यक्ति को नतमस्तक होना पडता है ।

3) जाति व्यवस्था के प्रति विद्रोह

जातीयता भारतीय समाज को लगा हुआ एक कलंक है । इसी जातियता ने दलितों को गुलामी दु:ख एवं वेदना के सिवा कुछ नहीं दिया । जाति के नाम पर जीना सबसे भयावह और तरलीफ देह होता है । आधुनिक काल में भी लोग जातिभेद का ध्यान रखते हैं । इस संदर्भ में डॉ जोत्सना शर्मा लिखती हैं ''लोग जाति-पाति का ध्यान अभी तक इतना रखते है कि गरीब से गरीब व्यक्ति भी इसके पालन में अपने आप पर गर्व करता है''[8] समाज में हर एक व्यक्ति अपने जाति के प्रति एकनिष्ठ रहने का प्रयास करता है । अगर कोई व्यक्ति समाज के खिलाफ कोइ वर्तन करें तो उसे समाज से बहिष्कृत किया जाता है । जातीयता मिटाने के लिए समाज में सुधार होना आवश्यक है । प्रस्तुत कविता संग्रह ''बस्स ! बहुत हो चुका'' में वाल्मीकि जी ने जाती व्यवस्था पर तीखा प्रहार करते हुए कहा है -

''स्वीकार्य नहीं मुझे
जाना
मृत्यु के बाद
तुम्हारे स्वर्ग में
वहाँ भी तुम
पहचानोंगे मुझे
मेरी जाति से ही''[9]

हमारे मृत्यु के बाद भी तुम हमे हमारी जाति से ही पहचानोगे इसलिए मुझे उस स्वर्ग से तिरस्कार है जहाँ जाति व्यवस्था है ।

जातीय भेदभाव को मिटाने के लिए कवि आक्रोश करते हैं इस देश की समाज व्यवस्था में जातिभेद खून में बसे हुए कोढ़ की तरह है । जातिभेद-छुआछूत के विरुद्ध जितने भी आंदोलन इस देश में हुए वे भी कुछ समय के बाद उसी जातिभेद में फंसे हुए दिखाई दिये । सिख, इस्लाम और इसाई जैसे धर्मो ने उँच-नीच और जात-पात को नकारा परंतु इस देश में उनके अनुयायी भी इस व्याधि से पूरी तरह मुक्त नहीं हो सके ।

कवि वर्णवादी समाज व्यवस्था से प्रश्न वाचक संवाद की पहल करते हैं । जाति से मुक्ति के लिए कवि आवाहन करते है । जातीय भेदभाव को नष्ट करना चाहते हैं । वाल्मीकि जी में परिवर्तन की आकांक्षा है । वे कहते हैं -

''मेरी माँ ने जने सब अछूत ही अछूत
तुम्हारी माँ ने सब बामन ही बामन
चमारी नहीं जनेगी चमार
भंगिन भी नही जनेगी भंगी''[10]

कवि दलितों के मन में बरसों से पल रहे सामाजिक समानता के स्वप्न को रेखांकित करते हैं । कवि के अनुसार ऐसा क्यों होता है कि जन्म देने की जवकीय प्रक्रिया एक होने के बावजूद भी अछूत माता अछूत को और ब्राह्मन की माता ब्राह्मण को जन्म देती है । कवि पूछता है कि यह सिलसिला अनंत काल से स्थिर क्यों है -

''सब कुछ है
तुम्हारी मुट्ठी में
हवा धूप और धरती''[11]

दलित समाज प्रकृति के साथ कठोर संघर्ष करते हुए जीवन बीता रहा है । दलित वर्ग पुरुषार्थ द्वारा सभी चीजें प्राप्त करने में समर्थ है । वह संघर्ष कर हवा, धूप और धरती को भी अपने बस में बनाने की सोचता है । दलितों में एक प्रकार की चेतना पैदा हुई है जो उन्हें गुलामी से मुक्ति का मार्ग दिखाती है ।

निम्न जाति जो पीडा यातनाओं को अनुभव किया जाता है उन यातनाओं को अनुभव करके देखो आप लोगों को जिंदगी का सत्य मालूम हो जाएगा । कवि इस स्थिति का मूल जातिव्यवस्था को मानते हैं । जाती व्यवस्था पर तीखा प्रहार करते कवि कहते है -

''याद करो
उस सरकारी क्लर्क का चेहरा
जिसे पानी पिलाने से कतराता है
चपरासी''[12]

आज भी उच्च वर्ग समाज में समता स्थापित करने के पक्ष में नहीं है । उन्हें डर हे आज भी उच्च वर्ग समाज को आँच आ सकती है । कवि जातीव्यवस्था को समाज से मिटाना चाहता है ।

4) अंधश्रद्धा एवं धार्मिक पाखंडता के प्रति विद्रोह

भारतीय समाज व्यवस्था में धम के नाम पर धर्म के जाननेवालों का अज्ञानी लोगों पर प्रबल वर्चस्व रहा । आम जनता के अज्ञान का फायदा उठाकर उन्होंने धर्म की आड़ में आर्थिक, बौद्धिक मानसिक शोषण किया । सभी लोगा के मन में धर्म के प्रति श्रद्धा होती है धर्म की इसी शक्ति के कारण समाज में अंधश्रद्धा का निर्माण हुआ । यह इस तरह फल गया है कि इसका प्रभाव आज के मशीनों के युग में भी स्पष्ट दिखाई देता है ।

'बस्स ! बहुत हो चुका' में धमाधता को स्पष्ट करते हुए कवि ने स्पष्ट रुप से पूँछा है -

''क्यों नही आती बाढ़ गंगा में
क्यों नहीं उठकर बैठ गया अधजला मुर्दा
काशी के मणिकर्णिका घाट पर ?
क्यों नही उमड़ा चक्रवात
महासागर की विस्तृत लहरों पर
जब पुष्पवर्षा की थी देवताओं ने तपस्वी की हत्या पर''[13]

कवि ने स्पष्ट शब्दों में धर्मग्रंथो पर तीखा प्रहार किया है क्योंकि अंधश्रद्धा का मूल यही है । तपस्वी शंबूक की हत्या पर देवताओं ने पुष्प की वर्षा की थी तब गंगा में क्यों नहीं आई बाढ़, महासागर में चक्रवात क्यों नही हुआ ? इन धर्मग्रंथों का उपयोग अवसरवादी सवर्णो के मतलब के लिए किया जाता है इसलिए कवि धर्मग्रंथों को ही नकारते हैं । दलितों के शोषण का मूल धर्मग्रंथ है उसे ही कवि नष्ट करना चाहते हैं जो संस्कृति की आड़ में हमारा शोषण कर रहे हैं ।

5) दलित नारी का चित्रण

भारतीय समाज पुरुष प्रधान है । प्राचीन काल से नारी पुरुषों के हाथ का खिलौना बन चुकी है । नारी मुक्ति सही मायने में तभी संभव होगी जब उसे सामाजिक अधिकार प्राप्त होगा । नारी मुक्ति के अंतर्गत अलग अलग अस्मिता को बनाए रखने के साथ-साथ राजनीतिक, कानूनी, परिवारिक तथा आर्थिक इन समस्त अधिकारों को प्राप्त कर लेने की संकल्पना निहित है । भारतीय नारी परंपरागत धारणाओं को न पूरी तरह ठुकरा पाती है न पाश्चात्य धारणाओं को पूरी तरह अपना पाती है । वह अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए समस्त नीतिमूल्यों को ठुकराना चाहती है । दुनिया के सभी धर्म स्त्री के व्यक्तिरुप को नकारते हैं । नारो आज अपनी अस्मिता के लिए लड़ रही है । नारी अपने पर हुए अन्याय का विरोध कर रही है ।

प्रस्तुत काव्यसंग्रह में स्त्री जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति संवेदना के साथ व्यक्त हुई है -

''रात की सायों में
वह तलाशती है
अपने हिस्से का उजाला
धीरे से दुलारती है
गहरी नींद में सोय बच्चों को''[14]

कवि ने नारी शोषण की दाहकता को स्पष्ट किया है - आज भी समाज में नारी शोषण की शिकार होती नजर आती है । एक और नारी शोषण से पीडित है तो दूसरी और नारी होने से पीड़ित है । कवि नारी में चेतना उत्पन्न करते हुए कहते हैं -

''सुबह उठते ही वह
रात की स्थाही
हवाले कर देती है धूप के
भर लेती है नया दिन
अपनी साँसो में
मुठ्ठी भर सकून के लिए''[15]

दलित नारी मुठ्ठी भर सकून के लिए संघर्ष करती हुई दिखाई देती है । उसकी साँसे थोडी राहत लें सकें । परंतु आज दलित नारी शिक्षित हो रही है पुरुषों के समान वे ऑफिस में काम कर रही है । फिर भी आज उच्च वर्ग का दलित स्त्रियों के प्रति देखने का रवैया नहीं बदला है । उच्च वर्ग की मानसिकता में परिवर्तन होना आवश्यक है । वाल्मीकिजी की कविताओं में नारी को आत्मप्रेरित किया है । उन्हें सजग बनने के लिए प्रेरित किया है ।

6) दलितों की राजनीति का चित्रण

जनता का जनजीवन सुखी समृद्ध तथा सुरक्षित संपन्न बनाने हेतु भारतीय राजनीतिक संविधान में निहित मानवतावादी स्वतंत्रता बहुता न्याय का प्रावधान रखा । भारतीय संविधान में लोकतंत्रात्मक गणराज्य की कामना की गई जिसमें जनता के लिए अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य विचार-लेखन स्वातंत्र्य का प्रावधान रखा गया । इस प्रक्रिया में दलित समाज को देश की परिवर्तनशील मुख्यधारा से जुडने का सौभाग्य प्राप्त नही हो सका । स्वतंत्रता तो मिली लेकिन साधारण जनसामान्य की जीवन शैली में कोई फर्क नहीं आया ।

दलितों क आक्रोश को कवि ने व्यक्त किया है जो लाने का स्वरुप लेने में असमर्थ है -

''मैं जला हूँ
असंख्य लाक्षागृहों में
भोगी है नग्न वेदना
द्रोपदी चीर हरण की
रक्तरंजित खड़ा में
सुन रहा हूँ खामोश आहटें
आनेवाले महाभारत की''[16]

दलित शोषण की भट्टी में जल रहा है । दलित नग्न वेदना को संने के लिए बाध्य बनाया गया है । दलित अपने आक्रोश को खामोश आहों के रुप में व्यक्त करता है । क्या यह आहें महाभारत का स्वरुप ले सकती हैं । कवि ने दलितों को विद्रोह करने के लिए प्रेरित किया है ।

कवि दलितों को आंदोलन के लिए प्रेरित करते है । पाठक को सोचने के लिए मजबूर किया है । दलितों के आक्रोश में असंख्य पीडाएँ हैं, शेष के रुप में मुखरित होने के लिए कसमसा रही हैं । कवि प्रस्थापित शोषकों को चेतावनी देते हैं । दलितों को विद्रोह करने के लिए चेतित करते हैं -

''बस्स !
बहुत हो चुका
चूप रहना
निरर्थक पड़े पत्व
अब काम आयेंगे संतप्त जनों के''[17]

कवि ने यहाँ दलित समाज राजनीतिक दृष्टि से जिन यातनाओं का सामना करता है उसे अपनी तीखी वाणी से प्रकट किया है ।

भारत में दलित समाज की हालत ऐसी कि जो अधिकार लिए गाए हैं उनको प्राप्ति आज तक नहीं हो पाई है । दलितों के विकास में रोडे अटकाते है । दलितों का विकास इन्हें खलने लगता है । समाज विकास धारा से उन्हें अछूत रखते हैं, राजनीति से दूर रखते हैं, दलितों पर अधिकार जताना अपना अधिकार मानते है ।

वाल्मीकि जी की कविताएँ दलितों में प्रेरणा जगाने का कार्य करती हैं । समाज के परंपरागत विचारों के प्रति उनके मन में विद्रोही भावना दिखाई देती हैं । वाल्मीकिजी दलितों में चेतना उत्पन्न करना चाहतें हैं तथा दलित वर्ग को मुख्य प्रवाह से जोडना चाहते है । कवि ने दलित समाज के प्रति प्रतिबद्धता दिखाई है साथ ही शोषित समाज को व्यक्त किया है । कवि ने शोषितों के प्रति विरोध प्रकट किया है । कवि समाज में समता स्थापित करना चाहते हैं । कवि ने प्रचलित रुढ़ी परम्पराओं पर तीखा प्रहार किया है । कवि ने दलितों को जीने क लिए संघर्ष करने का संदेश दिया है ।

संदर्भ

१. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 13.
२. - वही - , पृ. 29.
३. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स ! बहुत हो चुका, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 20.
४. - वही -, पृ. 80.
५. रघुवीर सिंह, डॉ अम्बेडकर और दलित चेतना, कामना प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 75.
६. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स ! बहुत हो चुका, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 75.
७. - वही -, पृ. 11.
८. डॉ ज्योत्सना शर्मा, शिवाणी का हिंदी साहित्य : सामाजिक परिप्रेक्ष्य, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर, पृ. 80.
९. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स ! बहुत हो चुका, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 78.
१०. - वही -, पृ. 67.
११. - वही -, पृ. 40.
१२. - वही -, पृ. 43.
१३. - वही -, पृ. 47.
१४. - वही -, पृ. 57-58.
१५. - वही -, पृ. 85-86.
१६. - वही -, पृ. 61-62.
१७. - वही -, पृ. 80.